अर्थव्यवस्था का नमक

.........लीना मेहेंदळे

पिछले पचास वर्ष से सिर धुन-धुनकर रोया जा रहा था कि सरकार में लाइसेंस-कोटा-परमिट राज है जबकि इसे मुक्त अर्थव्यवस्था को अपनाना चाहिए ताकि उद्यमियों के लिए उत्पादन क्षमता के नए आयाम खुलें। लेकिन हर उद्यमी अपने-अपने उत्पाद और अपनी-अपनी क्षमता के अनुसार आंशिक नियंत्रण की बात करता था। यानी वे नियंत्रण हटने चाहिए जिनका हटना उसके लिए फायदेमंद हो और वे रहने चाहिए जो उसे स्पर्धा से बचाते हों। अर्थात यह भी एक तरह से आरक्षणवादी सिद्धांत है। सामाजिक आरक्षण को लेकर हजार चर्चाएं और आंदोलन होते रहे, जबकि आर्थिक या आद्योगिक आरक्षण का खेल हमेशा पर्दे के पीछे खेला जात रहा। बहरहाल, विदेशियों की नजर हमारे देश में मिल सकने वाले बाजार पर पड़ी और पूरे विश्व में अचानक यह आलोक क्षण मात्र में फैल गया कि आयात प्रतिबंध हटने चाहिए। हमारी अर्थव्यवस्था खुले तो यों भक से खुले कि ब्रह्मांड के दूसरे छोर तक कहीं कोई दीवारें, दरवाजे या रुकावटें न हों। जो भी अपनी पेदावार यहां लाकर बेचना चाहता है, बेचे। जो भी यहां टोल-नाकों पर बैठकर उगाही करना चाहता हो, करे। अब हम खुल गए हैं।

लेकिन हम खुले हैं तो किसके लिए? उनके लिए जो उत्पादक हैं। उनके लिए नहीं, जो उपभोक्ता हैं। उपभोक्ता पर तमाम बंधन लगाए जा सकते हैं और लगाए जाएंगे क्योंकि तभी तो उत्पादक निश्चिंत रहेंगे कि उनके माल की खपत होगी। उपभोक्ता पर बंधन लगाने के दो तरीके होंगे : स्वच्छ और प्रच्छन्न। स्वच्छ का अर्थ यहां सफाई से नहीं है। स्वच्छ यानी जो डंके की चोट पर बताए जाएंगे। प्रच्छन्न वे जिन्हें किसी बहाने से लगाया जाएगा। एक बहाना इसमें बहुत काम आएगा और वह है सरकार की अनुपलब्धियों का, जो कि पिछले पचास वर्षों से चली आ रही हैं और

आगे भी चलेंगी। इसके माध्यम से बहाने मिलते रहेंगे।

उदाहरण खोजने के लिए दूर जाने की जरूरत नहीं है। नमक का उदाहरण समाने है। जिस देश पर अपनी संपत्ति लुटाने के लिए समुद्र तीन दिशाओं से पलकें बिछाए बैठा है वहां छोटे-छोटे हजारों नमक-भंडार हों तो कोई आश्चर्य नहीं। यहां कई-कई पीढ़ियां सदियों से नमक बनाने के व्यवसाय में जुटी हों और सारी जनता को अत्यंत सस्ती दर पर नमक मुहैया होता रहा हो तो आश्चर्य नहीं। प्रकृति ने तो सौगात देने में इतनी उदारता बरती कि समुद्र के अलावा हमारे कई पहाड़ों से भी नमक प्राप्त किया जा सकता है। लेकिन नमक खाने वाला कौन है? करीब बीस प्रतिशत अतिधनवान से लेकर अस्सी प्रतिशत गरीब और अतिगरीब तक सभी। उन बीस प्रतिशत को नमक की महंगाई से कोई अंतर नहीं पड़ता। जिन अस्सी प्रतिशत को पड़ता है उन्हें क्षुद्र उपभोक्ता कहा जा सकता है। उन्होंने अभी तक 'अधिक सफेद नमक' खाने की धन्यता को नहीं जान है।

उधर हजारों छोटे नमक उत्पादक व्यवसायियों की तुलना में उन महिमामय उत्पादकों का पलड़ा भारी है तो बनाएंगे तो नमक ही, लेकिन पर्याप्त साज-सज्जा के साथ, और उस नमक से प्राकृतिक आयोडिन हटाकर। उसमें दुबारा बड़े तामझाम और निहित कर्मकांड (यहां-प्रोसेसिंग के अर्थ में) संपन्न कराकर आयोडीन वापस डाला जाएगा और उपभोक्ता से कहा जाएगा-लो, इसे खाओ। नहीं खाते? अरे भाई, कहां हो मेरी सरकार? इस पर कुछ प्रतिबंध लगाओ। क्या प्रच्छन्न तरीके चाहिए? तो उन बीमारियों के आंकड़े फाइल में दर्ज करो जो आयोडीन की कमी से होते हैं । लेकिन फैसले का हक उपभोक्ता को न दो। उत्पादक के लिए खुली अर्थव्यवस्था है, उसे अपने आयोडीन-नमक कारखाने की क्षमता बढ़ानी है तो वह बढ़ाएगा। लेकिन यदि उपभोक्ता कहे कि वह आयोडीन-नमक मैं नहीं खाता, मुझे वही पुराना सस्ता, प्राकृतिक (और समुद्र-जल से बना हो तो आयोडीन की पर्याप्त मात्रा को प्राकृतिक रूप से संजोने वाला) नमक चाहिए, तो भई सरकार इसे इतनी खुली छूट, खुली आजादी तो न दो कि वह हमारा उत्पाद खाने की

बजाय उन छोटे समुद्रतटीय सस्ते नमक उत्पादकों का उत्पाद खरीदें।

बंधन लगाने के बहानों के लिए भी दूर तक दौड़ लगाने की जरूरत नहीं है। कह दो कि हमारे स्वास्थ्य और शिक्षा विभाग कार्यक्षम नहीं थे, वे जनता को आयोडीनयुक्त नमक की आवश्यकता से अतगत कराने में कामयाब नहीं थे, न होंगे। जब जनता ज्ञानी हो, तब फैसला उस पर छोड़ा जा सकता है, लेकिन घोर अज्ञान में घिरी जनता को लेकर दो कठिनाइयां हैं। पहली यह कि उसे आयोडीनयुक्त नमक की आवश्यकता का ज्ञान नहीं है ओर दूसरी यह कि समुद्री नमक में प्राकृतिक रूप से आयोडीन मौजूद होता है, यह ज्ञान उससे छिपाने की भी आवश्यकता है। सो, खुली अर्थव्यवस्था उत्पादकों के लिए सारे दरवाजे खोलती चली जाएगी। उपभोक्ता के लिए दरवाजे बंद हो सकते हैं।

....